

जगदीश पंकज के नवगीतों में आम आदमी का संघर्ष और अस्तित्व.बोध

शिवराज¹ एवं डॉ० रामवतार मेघवाल²

¹पीएचडी शोधार्थी

²आचार्यए राजकीय कला कन्या महाविद्यालयए कोटा

सार रू

समकालीन हिंदी नवगीत ने गीत को आत्मगत प्रणय और कल्पना.लोक से निकालकर जीवन के कठोर यथार्थ से जोड़ा है। इस धारा में जगदीश पंकज का स्थान विशिष्ट हैए क्योंकि उनके नवगीतों का केंद्रीय पात्र वह आम आदमी है जो श्रम करता हैए अभाव झेलता हैए व्यवस्था के वायदों से छला जाता है और अपनी पहचान के लिए निरंतर संघर्षरत रहता है। प्रस्तुत शोध.आलेख में कवि के तेरह संग्रहों कोए जिनमें 'सुनो मुझे भी' ;2015ए से आरम्भ होकर 'वर्तमान टूटे कंधों पर' ;2024ए तथा बाद की उपलब्ध कृतियाँ भी सम्मिलित हैंए प्राथमिक स्रोत मानकर आम आदमी के संघर्ष के चार आयामों का विश्लेषण किया गया हैरू श्रम और अभावए बाज़ार और वस्तुकरणए सत्ता और व्यवस्थाए तथा जाति और लिंग पर आधारित हाशियाकरण। साथ ही यह देखा गया है कि यह संघर्ष किस प्रकार अस्तित्व.बोध में रूपांतरित होता हैए जहाँ व्यक्ति अपने होनेए सुने जाने और अपने नाम की रक्षा का प्रश्न उठाता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि पंकज के नवगीतों में अस्तित्व.बोध निराशा या पलायन में नहींए बल्कि 'साक्षी.भाव' और सामूहिक प्रतिरोध में परिणत होता है।

मुख्य शब्दरू नवगीतए जगदीश पंकजए आम आदमीए संघर्षए अस्तित्व.बोधए हाशियाकरणए प्रतिरोधए समकालीन हिंदी कविता

प्रस्तावना

हिंदी गीत की लंबी परंपरा में एक दौर ऐसा भी रहा जब गीत का संसार प्रेमए विरहए प्रकृति और आध्यात्मिक उड़ान तक सीमित माना जाता था। स्वातंत्र्योत्तर भारत में जब मोहभंगए विस्थापनए नगरीकरण और आर्थिक विषमता ने जनजीवन को झकझोराए तब गीत ने भी अपनी दिशा बदली और 'नवगीत' के रूप में अपने समय के खुरदरे यथार्थ से संवाद आरंभ किया। लय और गेयता को छोड़े बिना नवगीत के कथ्य में किसानए मज़दूरए दिहाड़ीदारए विस्थापित ग्रामीण और महानगर की भीड़ में खोया हुआ साधारण मनुष्य दिखाई देने लगा। इसी परंपरा में जगदीश पंकज की उपस्थिति अलग से रेखांकित करने योग्य है। उनके गीतों में आम आदमी केवल सहानुभूति का विषय नहीं हैय वह स्वयं वक्ता हैए जो अपनी बात कहता हैए प्रश्न पूछता है और सुने जाने की माँग करता है। उनका पहला संग्रह ही 'सुनो मुझे भी' शीर्षक से आया और बाद के संग्रहों तक पहुँचते. पहुँचते यह आग्रह 'साक्षी' हैं हम समय के' जैसी दृढ़ घोषणा में बदल गया। इस अर्थ में उनकी काव्य.यात्रा स्वयं आम आदमी के संघर्ष से अस्तित्व.बोध तक की यात्रा है।

प्रस्तुत आलेख कवि के तेरह संग्रहों के आधार पर यह विश्लेषण करता है कि उनके नवगीतों में आम आदमी का संघर्ष किन रूपों में व्यक्त हुआ है और वह पहचान, गरिमा, आवाज़ तथा स्मृति के प्रश्नों तक कैसे पहुँचता है। अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक है।

नवगीत और आम आदमी: वैचारिक पृष्ठभूमि

नवगीत का उदय जिन परिस्थितियों में हुआ, उनमें साधारण मनुष्य का संघर्ष स्वाभाविक रूप से केंद्र में था। नवगीत आंदोलन ने नगरीकरण, औद्योगीकरण, गरीबी, अलगाव और आम आदमी के संघर्ष को अपना कथ्य बनाया। इसी आधार पर माना गया कि गीत की आत्मा व्यक्ति-केंद्रित रही। जबकि नवगीत की आत्मा समष्टि में है।¹ नवगीतकारों ने आम आदमी की पीड़ा, विवशता और शोषण को सीधे प्रस्तुत किया। इसीलिए नवगीत उसके दुःख-दर्द की वाणी बन सका।² इक्कीसवीं सदी के नवगीतों में भी मनुष्य को भय, संत्रास, अन्याय और शोषण से मुक्त करना नवगीतकारों का प्रमुख उद्देश्य रहा है।³

अस्तित्व-बोध से यहाँ आशय किसी दार्शनिक संप्रदाय की स्वीकृति से नहीं, बल्कि उस चेतना से है जिसमें व्यक्ति अपने होने को प्रश्न की तरह अनुभव करता है। क्या मैं दिखाई देता हूँ? क्या मुझे सुना जाता है और क्या मेरी पहचान मेरी अपनी है? पंकज के यहाँ यह बोध निजी अकेलेपन से अधिक सामाजिक अवमानना से उपजता है। इसलिए संघर्ष और अस्तित्व-बोध एक ही अनुभव के दो सिरे हैं।

जगदीश पंकज: रचना-यात्रा और काव्य-दृष्टि

जगदीश पंकज का जन्म 1952 में उत्तर प्रदेश के पिलखुआ, गाज़ियाबाद में एक दलित परिवार में हुआ और उनके नवगीतों में धर्म, जाति, समाज, राष्ट्र और सत्ता की परख, मानवीय एवं लोकतांत्रिक विवेक से हुई है। पहला नवगीत संग्रह 'सुनो मुझे भी' 2015 में आया, जिसके बाद 'निषिद्धों की गली का नागरिक', 2015 में 'समय है सम्भावना का', 2018 में 'आग में डूबा कथानक' और 'मूक संवाद के स्वर', 2019 में 'अवशेषों की विस्मृत गाथा', 2020 में 'प्यास की पगडंडियों पर', 2021 में प्रकाशित हुए।⁴ इसके अतिरिक्त 'आक्रामक श्रद्धा के युग में', 'हँसोए स्वयं पर हँसो', 2023 में 'वर्तमान टूटे कंधों पर', 2024 में 'शिलाखंड पर खिंची लकीरें' आकाशी हैं हम समय के और कविता संग्रह 'द्रोह असहमत इच्छाओं का' इस यात्रा के पड़ाव बने।

आकाशी हैं हम समय के के आत्मकथ्य में कवि ने इसे अपने नवगीत संग्रहों में बारहवाँ और प्रकाशित लेखन में तेरहवाँ प्रयास बताया है। वहीं उन्होंने अपनी रचना-दृष्टि भी स्पष्ट की है। जब सत्य पर ही अभियोग चलाया जा रहा हो, तब सच के पक्ष में गवाही देना सजग साहित्यकार का कर्तव्य बन जाता है।⁵ इस दृष्टि का बीज उनके पहले संग्रह के पहले गीत 'गीत है वह' में मिलता है। यहाँ गीत की परिभाषा यह है कि वह हर परिस्थिति में आँखें उठाकर समय से जूझता है, अर्धसत्यों के दायरों से निकलकर ज़िंदगी की व्यथा को छूता है, कठिन अनुभूतियों की आँच में टेढ़ी पहली बूझता है और उस क्षण सहारा बनकर उभरता है जब किसी को कोई अपना नहीं सूझता।⁶

गीत है वह
जो सदा आँखें उठाकर
हो जहाँ पर भी
समय से जूझता है
अर्धसत्यों के
निकलकर दायरों से

जिन्दगी की जो
व्यथा को छू रहा है।

कृ जगदीश पंकज ए सुनो मुझे भी ए पृ 33^व

यह परिभाषा उनके पूरे काव्य का घोषणापत्र है। गीत यहाँ आत्मविलास नहीं ए उस आदमी के साथ खड़े होने का उपक्रम है जिसे समय ने अकेला छोड़ दिया।

श्रम ए भूख और अभाव का संघर्ष

जगदीश पंकज के नवगीतों में आम आदमी का एक प्रमुख रूप श्रम से थकी हुई देह के रूप में उभरता है। छिप गया है दिवस में दिन भर भागते-भागते थका आदमी साँझ की गोद में लौटता है। दिन ने उसे थकान और उबासी ही दी है। क्षुद्र प्रतिस्पर्धा में झुलसते हुए उसका रक्तवर्णी शरीर पीला पड़ गया है। अल्पविकसित और मलिन बस्तियों के इस संसार में उसके हिस्से केवल उपदेश आते हैं। जबकि भूख से अंतर्द्विष्ट कसमसाती रहती है।⁷ शनिष्ठुर सूरज फेंक रहा है। में यही संघर्ष प्रकृति की कठोरता से जुड़ जाता है। रोज़ की दिहाड़ी की उम्मीदें सुबह से ही सिसकने लगती हैं। पंछी पानी को तरसते हैं और बूँद-बूँद की गणना जारी रहती है।⁸

जितना दीख रहा। इस संघर्ष को वैचारिक आधार देता है। जो दिखाई दे रहा है वह पूरा सत्य नहीं। बंजर धरती पर बहा पसीना। भूख से ऐंठती आँतें और यह प्रश्न कि दरिद्रता की रेखा कौन तय कर रहा है। सब उसी अनदेखे सच के हिस्से हैं। गीत का निष्कर्ष यह है कि बरगद की छाया में भी आम आदमी कितनी गर्मी सहता है।⁹ यहाँ कवि आम आदमी पद का सीधा प्रयोग करता है और उसे एक ठोस आर्थिक-सामाजिक संदर्भ देता है।

जितना दीख रहा
उतना ही सत्य नहीं
अनदेखा उससे ज्यादा सच कहता है।

कितनी आमदनी हो
खर्चा कितना हो
कौन कर रहा तय दरिद्रता की रेखा
वैभव के कितने मानक
तय किये गये
किसने कब कर दिया कहीं कोई लेखा।

दीख रहा है
बरगद की छाया में भी
आम आदमी कितनी गर्मी सहता है।

कृ जगदीश पंकज ए साक्षी हैं हम समय के ए पृ 74^व

श्रम की यह दुनिया स्त्री-श्रम और पारंपरिक कारीगरी को भी देखती है। कच्ची कैरी बेच रही है। में रामकली सड़क किनारे नीम की छाया में बैठकर कड़ी दोपहर में कच्ची कैरी बेचती है। उसके पेट की आग सुलग रही है। फिर भी वह आते-जाते चेहरों को एक क्षण की खुशी भी सौंप रही है।¹⁰ कहीं चदरिया बुनें कबीरा। कबीर के बुनकर-बिंब को आर्थिक विस्थापन की त्रासदी में बदल देता है। करघा टूट चुका है। कमाकर खाने वाला कारीगर परजीवी जीवन को अस्वीकार करता है। पर बाज़ार में अकेला खड़ा है।¹¹

श्रमजीवी की नियति का सबसे मार्मिक बिंदु हम टंगी कंदील के बुझते दिये में मिलता है। ये दिये केवल बुझने के लिए जल रहे हैं अभावों में पलना और तनावों में जलना ही इनका जीवन है। हर महीने योजनाएँ वेतन दिवस की आस पर टलती रहती हैं और व्यथा तभी कही जा सकेगी जब शब्द चीख में ढल जाएंगे।¹² कंदील की शोभा दियों के जलने से है पर दियों की नियति बुझना है यह समाज निर्माण में खपते श्रम का सशक्त रूपक है।

हम टंगी कंदील के बुझते दिये
जल रहे हैं सिर्फ बुझने के लिए
आग का केवल हमें क्षणिक अस्तित्व है
आँधियों से भी घिरा व्यक्तित्व है
हम अभावों में सदा पलते रहे
हम तनावों में सदा जलते रहे।

कृ जगदीश पंकज ए सुनो मुझे भी ए पृष्ठ 92^व

भूख केवल आर्थिक प्रश्न नहीं रहती वह सांप्रदायिक हिंसा से भी जुड़ जाती है। शहर में दंगा हुआ है में नत्थू और यामीन दोनों की आँखें गमगीन हैं और दोनों को बिना मज़दूरी के दर्द ढोना और भूखे पेट सोना पड़ेगा।¹³ दंगा यहाँ धर्म का नहीं दिहाड़ी का संकट है। शर्तनामे सामने बिखरे पड़े में ऋण चुकाने के लिए ऋण बढ़ते जाने की विडंबना एक औसत ज़िंदगी को मौन एकालाप में बदल देती है।¹⁴

बाज़ार भूमंडलीकरण और मनुष्य का वस्तुकरण

उदारीकरण के बाद का भारत पंकज के गीतों में एक ऐसे बाज़ार के रूप में उपस्थित है जो मनुष्य की इच्छाएँ समय और पहचान तीनों पर अधिकार कर लेता है। आ गया बाज़ार में बाज़ार घर की देहरी लाँघकर जागृति से शयन तक पहुँच गया है। आपको क्या चाहिए यह अब बाज़ार तय करता है क्रेडिट कार्ड का संदेश घर तक आ पहुँचा है और मनुष्य किसी उत्पाद का लक्ष्य बनकर मात्र आँकड़ा और इकाई रह गया है।¹⁵ इस प्रकार मनुष्य की नागरिक पहचान पर उपभोक्ता परक पहचान का दबाव स्पष्ट होता है।

इस व्यवस्था में प्रबंधन के
नियम काफी कड़े हैं
हम किसी उत्पाद के ही
लक्ष्य बनकर आँकड़े हैं

हम इकाई बन रहे बस
लाभ से लेकर
निरर्थक अध्ययन तक।

कृ जगदीश पंकज ए निषिद्धों की गली का नागरिक ए पृष्ठ 75^व

हवा की हर सतह पर में वैश्विक हवाएँ संयम के सारे अवरोध तोड़ रही हैं और विश्व का बाज़ार घर तक आ पहुँचा है। फिर भी गीत का वक्ता वहाँ अपना दाम स्वयं तय करने का दावा करता है वह व्यवस्था की क्रूरता का ताप पीते हुए भी अभिशप्त होकर जीना अस्वीकार करता है क्योंकि साँसों पर नियंत्रण उसे स्वीकार नहीं और इसीलिए उसका संग्राम चलता रहता है।¹⁶

तकनीक ने इस वस्तुकरण को और गहरा किया है। कैसे पार लगे में डिजिटल होता हुआ आदमी जागते सोते घुटन और अवसाद ढो रहा है और संबंधों का ठंडापन भी व्यापार लगने लगा है।¹⁷ श्यान्तिक रसहीनता से कवि कृत्रिम बौद्धिकता की छलाँगों के बीच अनुभूतियों के ताप को बचाने की चिंता करता है क्योंकि एक नीरस

प्रतिस्पर्धा ज़िंदगी पर छा रही है।¹⁸ इस संसार में आम आदमी का संघर्ष रोट्टी के साथ-साथ अपनी वास्तविकता बचाए रखने का भी संघर्ष है।

सत्ताएँ व्यवस्था और वायदों से छला गया आदमी

जगदीश पंकज के नवगीतों में सामान्य जन का एक निरंतर अनुभव व्यवस्था द्वारा छले जाने का है। घोषणाओं तक^{१९} में शब्द केवल घोषणाओं तक सिमट गए हैं जनहित के नाम पर कही गई बातें विषैले तीर-सी चुभती हैं आदमी को आदमी से काटकर किसी नायक के लिए ढाला जा रहा है और जिन आश्वस्तियों पर भरोसा था वे निरर्थक उक्तियाँ बन गई हैं।¹⁹ हम भी इसी गाँव के वासी^{२०} में गाँव का साधारण आदमी पूछता है कि दर-दर भटकते लोगों की खबर क्या राजा के कारिंदों को नहीं है। उपलब्ध सूचनाओं में वह केवल सजे हुए आँकड़ों के रूप में दर्ज है। कागज़ पर बनी योजना के फूल उस तक आते-आते कुम्हला जाते हैं और चुनाव के वायदे बेअसर रह जाते हैं।²⁰

हम भी इसी गाँव के वासी
भटक रहे दर-दर
क्या राजा के कारिंदों को
इसकी नहीं खबर।

हम उपलब्ध
सूचनाओं में
सजे आँकड़े भर
कितनी करुणा
बरसायी
अनुदान हमें देकर।

कृ जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए पृष्ठ 92^१

आँकड़ों में सिमटा यह आदमी शकटपुतली-से नाच रहे हैं^{२१} में भी है जहाँ लोगों की अपनी-अपनी रामकहानी केवल आँकड़ों में अंकित है उम्र भर वे दाना-पानी के लिए पिसते रहे और उनके हिस्से हाशिये तथा टूटे काँच आए।²¹ फिर मंथन चल रहा^{२२} में यह मंथन इसी का है कि जन और तंत्र की दूरी कैसे बनी रहे। जन दाना-पानी की चिंता में उलझा है और साधनहीन भूखे पेट पंडालों में राजा का जय-जयकार करते हैं द्रोण और अभिमन्यु के बिंब सत्ता के व्यूह का संकेत देते हैं।²²

सत्ता का यह चेहरा केवल उपेक्षा का नहीं दमन का भी है। निरर्थक आश्वस्तियाँ लेकर^{२३} में आदमी पर कानून की शक्तियों और गोलियों की ओट में घोषणाओं की दुगडुगी बजाकर वार किए जाते हैं और प्रलोभन की चूसनी देकर उसे उसकी औकात^{२४} याद दिलाई जाती है।²³ देखो ये कैसे दिन आये! व्यंग्य के माध्यम से ऐसे दरबार का चित्र खींचता है जहाँ सभा में कोई सहगान से हटकर गाने वाला नहीं और नंगे को नंगा कहने का साहस किसी में नहीं।²⁴ आज का व्यंग्य वस्तुतः आम आदमी की व्यथा से ही जुड़ा हुआ है।²⁵

पीड़ा का प्रदर्शन भी इस व्यवस्था का एक हथियार है। किस करुणा के शोधपत्र में^{२६} में वंचितों की पीड़ा का बखाना प्रायोजित मंचों पर होता है और पीड़ित की चीत्कार को हँसी-ठिठोली का नाम दे दिया जाता है।²⁶ कैसे हिरन बच पाएँगे^{२७} पूछता है कि जब हर ओर शिकारी खड़े हों तब हिरन कैसे बचें।²⁷ लोक-परंपरा में हिरन सामान्य जनता का प्रतीक रहा है जो आज भी अपने सामान्य अधिकारों से प्रायः वंचित रह जाती है।²⁸

हाशिये का आदमीरू जातिर स्त्री और श्रम की गरिमा

जगदीश पंकज के यहाँ आम आदमीरू एक समरूप सामाजिक श्रेणी के रूप में प्रस्तुत नहीं होता। उसकी सबसे निचली परत पर वह मनुष्य है जिसके श्रम को कभी गरिमा नहीं मिली। किस.किसका संवेदन जीवितरू सीवर में होने वाली मौतों पर प्रश्न करता है कि उन पर कौन द्रवित होता है। मुआवज़ा भी मृतक की वर्णजाति से तय होता हैरू पीड़ित अभियुक्त बनता है और अपराधी महिमामंडित नायक।²⁹ किस.किसको विचलित करते हैंरू में सीवर से निकलते उन मनुष्यों का बिंब है जो समाज की गहरी गंदगी साफ़ करते हैं और जिन्हें सीमित संवेदन वाले विशिष्टजन नाक पर रूमाल चढ़ाकर भौंचक होकर देखते हैं।³⁰

किस.किसका संवेदन जीवित
कौन द्रवित अन्याय देखकर
सीवर की मौतों को लेकर
दुख.दर्दों से कौन द्रवित है

जब मुआवजा मृतक व्यक्ति के
वर्णजाति से निर्धारित हो
तब निश्चित है न्याय.प्रणाली
शब्दों में ही तथाकथित है।

कू जगदीश पंकजरू मूक संवाद के स्वररू पृष्ठ 597

जातिगत अवमानना की ऐतिहासिक गहराई इन्कार की चुप्पीरू में दिखाई देती है। हजारों वर्ष के इतिहास का बोझ ढोती वक्ता की चेतना घृणा से दबती रही हैरू जब धर्मग्रंथों में उसकी वेदना लिखी ही नहींरू तो वह गर्व से उसे अपना धर्म कैसे कहेरू उसका मौन इसलिए प्रतिकार और अधिकार की चुप्पी है।³¹ पूर्ववर्ती प्रगतिशील गीतकार मज़दूर.किसान के प्रति संवेदनशील रहेरू किंतु दलित प्रश्न उनकी चेतना से प्रायः बाहर रहारू पंकज ने दलित काव्य को नवगीत के सृजन से समृद्ध किया।³² सह रहा है पीठ पररू का दलितरू सर्वहारा श्रमिक हर वार सहता है पर झुकता नहींरू क्योंकि गौरवमय कहे जाने वाले अवशेष उसी के श्रम का संदेश हैं।³³

स्त्री इस संघर्ष में दोहरी मार झेलती है। आदर्श थके सम्बन्ध पकेरू में अपहृत और बलात्कृत बालाओं का प्रश्न है और स्तुम ऊपर देखोरू में शिखर छूने का उपदेश पाने वाली बेटियाँ उम्र भर आदेशों और पहरो में बँधी रहीं।³⁴³⁵ जगह.जगह शाहीनबाग हैरू में घूँघट छोड़कर सड़क पर उतरी स्त्री संविधान.रक्षा के संकल्प के साथ सार्वजनिक प्रतिरोध की भाषा बोलती है।³⁶ इद्रोह असहमत इच्छाओं कारू की मुक्त छंद कविता शकल की लड़ाई के लिएरू पूछती है कि प्रगति की व्याख्या में मज़दूर के आक्रोशरू दलितों की यातना और स्त्री.उत्पीड़न का उल्लेख कहाँ है।³⁷

संघर्ष से अस्तित्व.बोध तक

बाहरी संघर्ष अंततः इस प्रश्न पर ठहरता है कि मेरे होने को स्वीकार कौन करेगा। सुनो मुझे भीरू शीर्षक गीत इसी प्रश्न का गीत है। वक्ता कहता है कि वह भी सदन में उपस्थित हैरू पर उसका पक्ष सुने बिना हमदर्द बनकर अनुमान से निर्णय किए जा रहे हैं। जो सुनाया या दिखाया जा रहा हैरू वह इस समय का पूरा सत्य नहीं। अंत में वह पूछता है कि कब सुनोगेरू क्या उसे अपने रुदन में क्रोध भी मिलाना होगा।³⁸ यहाँ अस्तित्व का अर्थ केवल जीवित रहना नहींरू बल्कि अपनी उपस्थिति को स्वीकृत कराना है।

सुनो मुझको
इस समय

मैं भी उपस्थित हूँ
सदन में।

कब सुनोगे
क्या मिलाऊँ क्रोध को
अपने रुदन में।

कृ जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए पृ 111दृ112

श्चीखकर ऊँचे स्वरों में यही बोध आत्मसम्मान का रूप लेता है। चिरबहिष्कृत वक्ताए जिसे व्यवस्था एकलव्य की तरह नहीं अपनातीए स्वीकार करता है कि वह साधनहीन हैए पर उसका अस्तित्व और निष्कलुष व्यक्तित्व हैय अब अपमान उसे स्वीकार नहीं।³⁹

आधुनिक नौकरशाही में पहचान का यह संकट और तीखा हो जाता है। शपथपत्र के अनुच्छेद में का वक्ता पूछता है कि जब उसने सब कुछ स्वयं लिख दियाए तब भी उससे बार.बार सत्यापन क्यों माँगा जाता है।⁴⁰ श्लो स्वयं से भी तनिक सीए में लोग पंजीकरण की कतारों में अपना नाम आने की प्रतीक्षा में खड़े हैं और कवि आग्रह करता है कि हम स्वयं से अपना नाम पूछ लेंए ताकि वह किसी भागमभाग में गिर न जाए।⁴¹ नाम खो देने का यह भय आम आदमी के अस्तित्व.बोध का सबसे समकालीन रूप है।

शपथपत्र के अनुच्छेद में
मैंने ही लिख दिया स्वयं सब
फिर भी मुझसे बार.बार क्यों
माँगा जाता है सत्यापन।

कृ जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए पृ 58

इसी क्रम में टूटते नक्षत्र.सा जीवनए अनिश्चय से भरा है और पता नहीं किस ठौर जाकर गिरेगा।⁴² अब न चौकेंगे में लोग सड़क और अखबार की खबर बन गए हैं वे मरे भीए पर उनकी मृत्यु घोषित तक नहीं हुई।⁴³ इसाँसे बन्धक हुई में प्रतिबंधित जीवन.क्रम के बीच लोग अपने में सिमटते और सिकुड़ते जा रहे हैं।⁴⁴

अस्तित्व.बोध का एक आयाम स्मृति और इतिहास से भी जुड़ा है। श्लाद रहे हैं बोझ विगत का में वर्तमान के कंधों पर विगत का बोझ लादा जा रहा हैय जिनकी उभरी हुई पीठ पर लाठियाँ पड़ीं और जो रिसते खून से लथपथ हैं उनका बात नहीं होतीय पीड़ा की पदचाप छोड़कर चर्चा ललित निबंधों पर होती है।⁴⁵ एक पीढ़ी कर रही अपदस्थ में अखबार की कतरनें सजाई जाती हैं और पसीने से सने इतिहास के पन्ने दूर रख दिए जाते हैं।⁴⁶ संग्रह का शीर्षक वर्तमान टूटे कंधों पर स्वयं इस बोध का सघन रूपक है।

इस अस्तित्व.बोध की सबसे महत्वपूर्ण परिणति मैं से हम तक की यात्रा है। श्रोह असहमत इच्छाओं का की एक कविता में वक्ता स्वयं को आवाज़ए अभिव्यक्ति और आक्रोश कहता है और उससे भी आगे वह आँखए जिससे मौसम की पहचान होती है। इस पहचान के बाद मैं हम हो जाता है और करोड़ों हाथ हम एक हैं कहते हुए उठते हैं।⁴⁷ यही वह बिंदु है जहाँ पंकज का अस्तित्व.बोध पाश्चात्य अस्तित्ववाद के एकाकी मनुष्य से अलग हो जाता हैय यहाँ अकेलापन सामूहिकता में रूपांतरित होता है।

मैंकृ
जो आवाज हैए
अभिव्यक्ति हैए
आक्रोश हैए

इससे भी आगे आँख है
जिससे मौसम को देखते हुए
रंगों की पहचान भी होती है
इस पहचान के बाद मैं
हम हो जाता है।
उग आते हैं कन्धों पर
करोड़ों हाथ
उठते हुए
कहते हुए
हम एक हैं।

कृ जगदीश पंकज ए द्रोह असहमत इच्छाओं का ए हम एक हैं पृ 57 दृ 58

प्रतिरोध और साक्षीभाव

पंकज के यहाँ अस्तित्वबोध पलायन नहीं प्रतिरोध की भूमि है। श्रबोल अब ऊँचे स्वरों में का आह्वान है कि यदि असहमत हो तो हाथ उठाओ और मौन को आवाज़ दो।⁴⁸ जब विष भरी बदलिया आकर यह स्थापना करता है कि जब सारे अनुरोध किसी सभासदन में अनसुने रह जाते हैं तभी प्रतिरोध जगता है जल भी चट्टानें तोड़कर निर्झर तक पहुँचता है।⁴⁹ पाश की याद में पंजाबी कवि पाश को स्मरण करते हुए असहाय माताओं पिताओं विधवाओं और अनाथ बच्चों के लिए लड़ते रहने का संकल्प व्यक्त करती है।⁵⁰ खुद भी जिओ हमें जीने दो सह अस्तित्व की सहज किंतु दृढ़ माँग रखता है।⁵¹

पूछा जब बूढ़े बरगद से में बरगद स्वयं को युग युग की अनकही कथा का साक्षी बताता है और चेतावनी देता है कि अतीत का गान करते हुए वर्तमान को ठुकराया न जाए।⁵² साक्षी होने का यही भाव साक्षी हैं हम समय के में अपनी पूर्णता पाता है। सच कटघरे में खड़ा है और न्याय की सुबह पर झूठ का कुहरा तना है ऐसे में हम गवाही देने खड़े हैं ताकि न्याय मिथ्याचार से कलंकित न हो और जनहित बेसहारा न हो। इसलिए वे अंतिम विजय का स्वप्न लेकर युद्धरत हैं।⁵³

चल रहा अभियोग सच पर
हम खड़े देने गवाही
हर अराजक संतुलन में
साक्षी हैं हम समय के।

हो नहीं जाये
कलंकित
न्याय मिथ्याचार द्वारा
और जनहित
अपमान से
हो न जाये बेसहारा
इसलिए हम युद्धरत हैं
स्वप्न ले अंतिम विजय के।

साक्षी हैं हम समय के।

कृ जगदीश पंकज साक्षी हैं हम समय के पृ 110-111

यह गीत आम आदमी को पीड़ित से साक्षी की भूमिका में स्थापित करता है जो कल सुने जाने की याचना कर रहा था वह अब समय के न्यायालय में गवाह है। मायामृग एकलव्य अभिमन्यु और कबीर जैसे बिंबों को पलटकर कवि उन्हें आम आदमी के पक्ष में खड़ा करता है मैं कितने चित्र बना पाया में रैदास कबीर और नानक की करुणामय वाणी के अभाव की चिंता इसी का संकेत है।⁵⁴ स्कान में आकर कहा में अफवाहों और तंत्र के षड्यंत्रों से घिरे समय का चित्र भी इसी साक्षी दृष्टि से खींचा गया है।⁵⁵

निष्कर्ष

जगदीश पंकज के नवगीत आम आदमी को उसकी पूरी जटिलता में प्रस्तुत करते हैं श्रमिक बेरोज़गार कारीगर दिहाड़ी पर निर्भर मज़दूर सीवर में उतरता सफ़ाईकर्मी सड़क पर प्रतिरोध करती स्त्री और आँकड़ों में सिमटा ग्रामीण। उनके यहाँ संघर्ष चार स्तरों पर चलता है पेट की भूख से बाज़ार के वस्तुकरण से सत्ता के छल से और जाति-लिंग आधारित अवमानना से। यही संघर्ष धीरे-धीरे अस्तित्व-बोध में बदलता है जहाँ प्रश्न केवल जीवित रहने का नहीं बल्कि दिखाई देने सुने जाने और अपना नाम बचाए रखने का है।

जगदीश पंकज के नवगीतों में व्यक्त अस्तित्व-बोध एकाकी निराशा का नहीं बल्कि सामूहिक चेतना का है। सुनो मुझे भी की याचना से साक्षी हैं हम समय के की घोषणा तक की यात्रा यह दिखाती है कि उनका आम आदमी पीड़ा को पहचान में मौन को प्रतिकार में और हमें को हम में बदलता है। इस प्रकार उनके नवगीत इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए हाशिये के प्रश्नों को केंद्र में लाते हैं और समकालीन हिंदी कविता में आम आदमी की मुखर आवाज़ बनते हैं। उनका छंद विधान लोक बिंबों का प्रयोग और दलित काव्य परंपरा से संबंध आगे के स्वतंत्र अध्ययन के विषय हो सकते हैं।

संदर्भ

- 1^प जयप्रकाश मेरावी एवं बलराम अहिरवार हिंदी नवगीत परंपरा प्रमुख नवगीतकारों के योगदान के मूल्यांकन पर एक अध्ययन जर्नल ऑफ़ एडवांसेज़ एंड स्कॉलरली रिसर्च इन अलाइड एजुकेशन खंड 21^ए अंक 7^ए अक्टूबर 2024^ए पृ 64।
- 2^प डॉ जगदीश व्योम नवगीत में लोकतत्व की उपस्थिति अभिव्यक्ति वेब पत्रिका रचना प्रसंग 25 जून 2012।
- 3^प डॉ शार्दूल विक्रम सिंह इक्कीसवीं सदी के नवगीतों में जीवन-मूल्य द इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एडवांस्ड रिसर्च इन मल्टीडिसिप्लिनरी साइंसेज़, पृ 175-176 खंड 2^ए अंक 01^ए जनवरी 2019^ए पृ 177।
- 4^प कंवल भारती शर्म होती रेत के मुखर कवि जगदीश पंकज के नवगीत फ़ॉरवर्ड प्रेस वेब पोर्टल 9 मई 2022।
- 5^प जगदीश पंकज साक्षी हैं हम समय के आत्मकथ पृ 6।
- 6^प जगदीश पंकज सुनो मुझे भी गीत है वह पृ 33-34।
- 7^प जगदीश पंकज समय है सम्भावना का छिप गया है दिवस पृ 34-35।
- 8^प जगदीश पंकज साक्षी हैं हम समय के निष्ठुर सूरज फेंक रहा है पृ 84-85।
- 9^प जगदीश पंकज साक्षी हैं हम समय के जितना दीख रहा पृ 74-75।
- 10^प जगदीश पंकज सुनो मुझे भी कच्ची कैरी बेच रही है पृ 90।
- 11^प जगदीश पंकज मूक संवाद के स्वर कहां चदरिया बुनें कबीरा पृ 26-27।

- 12^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शहम टँगी कंदील के बुझते दियेए पृ 92।
- 13^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शहर में दंगा हुआ हैए पृ 76।
- 14^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शर्तनामे सामने बिखरे पड़ेए पृ 106।
- 15^व जगदीश पंकजए निषिद्धों की गली का नागरिकए शआ गया बाजारए पृ 75।
- 16^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शहवा की हर सतह परए पृ 60दृ61।
- 17^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शैसे पार लगेए पृ 69दृ70।
- 18^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए श्यान्तिक रसहीनता सेए पृ 64दृ65।
- 19^व जगदीश पंकजए शिलाखंड पर खिंची लकीरेंए शघोषणाओं तकए पृ 26दृ27।
- 20^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शहम भी इसी गाँव के वासीए पृ 92दृ93।
- 21^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शकठपुतली.से नाच रहे हैंए पृ 50।
- 22^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शफिर मंथन चल रहाए पृ 90दृ91।
- 23^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शनिरर्थक आश्वस्तियाँ लेकरए पृ 52दृ53।
- 24^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शदेखोए ये कैसे दिन आये!ए पृ 50दृ51।
- 25^व पुष्पलता अग्रवाल एवं व्यंकट अमृतराव खंदकुरेए शइक्कीसर्वी सदी का व्यंग्य साहित्यए रिसर्च जर्नीए विशेषांक.
1ए फ़रवरी 2019ए पृ 105।
- 26^व जगदीश पंकजए हँसोए स्वयं पर हँसोए शकिस करुणा के शोधपत्र मेंए पृ 33।
- 27^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शैसे हिरन बच पाएँगेए पृ 91।
- 28^व डॉ^० जगदीश व्योमए शनवगीत में लोकतत्व की उपस्थितिए अभिव्यक्ति ,वेब पत्रिकाद्वए 25 जून 2012।
- 29^व जगदीश पंकजए मूक संवाद के स्वरए शकिस.किसका संवेदन जीवितए पृ 59।
- 30^व जगदीश पंकजए वर्तमान टूटे कंधों परए शकिस.किसको विचलित करते हैंए पृ 33।
- 31^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शइन्कार की चुप्पीए पृ 102दृ103।
- 32^व कंवल भारतीए शगर्म होती रेत के मुखर कवि जगदीश पंकज के नवगीतए फ़ॉरवर्ड प्रेसए 9 मई 2022।
- 33^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शसह रहा है पीठ परए पृ 66।
- 34^व जगदीश पंकजए प्यास की पगडंडियों परए शआदर्श थके सम्बन्ध पकेए पृ 25।
- 35^व जगदीश पंकजए शिलाखंड पर खिंची लकीरेंए शतुम ऊपर देखोए पृ 59।
- 36^व जगदीश पंकजए प्यास की पगडंडियों परए शजगह.जगह शाहीनबाग हैए पृ 56दृ57।
- 37^व जगदीश पंकजए द्रोह असहमत इच्छाओं काए शकल की लड़ाई के लिएए पृ 59।
- 38^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शसुनो मुझे भीए पृ 111दृ112।
- 39^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शचीखकर ऊँचे स्वरो मेंए पृ 35दृ36।
- 40^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शशपथपत्र के अनुच्छेद मेंए पृ 58दृ59।
- 41^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शलो स्वयं से भी तनिक सीए पृ 108दृ109।
- 42^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शटूटते नक्षत्र.सा जीवनए पृ 67।
- 43^व जगदीश पंकजए सुनो मुझे भीए शअब न चौकेंगेए पृ 51।
- 44^व जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए शसाँसें बन्धक हुईए पृ 88दृ89।
- 45^व जगदीश पंकजए आक्रामक श्रद्धा के युग मेंए शलाद रहे हैं बोझ विगत काए पृ 33।
- 46^व जगदीश पंकजए वर्तमान टूटे कंधों परए शएक पीढ़ी कर रही अपदस्थए पृ 65।
- 47^व जगदीश पंकजए द्रोह असहमत इच्छाओं काए शहम एक हैंए पृ 57दृ58।

- 48^प जगदीश पंकजए निषिद्धों की गली का नागरिकए श्बोल अब ऊँचे स्वरो मेंए पृ^प 44।
- 49^प जगदीश पंकजए अवशेषों की विस्मृत गाथाए श्जब विष भरी बदलिया आकरए पृ^प 33।
- 50^प जगदीश पंकजए द्रोह असहमत इच्छाओं काए श्पाश की याद मेंए पृ^प 27।
- 51^प जगदीश पंकजए हँसोए स्वयं पर हँसोए श्खुद भी जिओए हमें जीने दोए पृ^प 65।
- 52^प जगदीश पंकजए अवशेषों की विस्मृत गाथाए श्पूछा जब बूढ़े बरगद सेए पृ^प 64दृ65।
- 53^प जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए श्साक्षी हैं हम समय के!ए पृ^प 110दृ111।
- 54^प जगदीश पंकजए साक्षी हैं हम समय केए श्मैं कितने चित्र बना पायाए पृ^प 20दृ21।
- 55^प जगदीश पंकजए आग में डूबा कथानकए श्कान में आकर कहाए पृ^प 58दृ59।